Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education
Vol. 13, Issue No. 2, July-2017, ISSN 2230-7540

हिंदी सिनेमा का समाज पर पड़ते प्रभाव का एक अध्ययन

Renu Kansal[1]* Dr. Govind Dwivedi[2]

[1]Research Scholar of OPJS University, Churu Rajasthan

[2]Assistant Professor, OPJS University, Churu Rajasthan

----------X----------

प्रस्तावना

हिन्दी सिनेमा, जिसे बॉलीवुड के नाम से भी जाना जाता है, हिन्दी भाषा में फ़िल्म बनाने का उद्योग है। बॉलीवुड नाम अंग्रेज़ी सिनेमा उद्योग हॉलिवुड के तर्ज़ पर रखा गया है। हिन्दी फ़िल्म उद्योग मुख्यतः मुम्बई शहर में बसा है। ये फ़िल्में हिन्दुस्तान, पाकिस्तान और दुनिया के कई देशों के लोगों के दिलों की धड़कन हैं। हर फ़िल्म में कई संगीतमय गाने होते हैं। इन फ़िल्मों में हिन्दी की "हिन्दुस्तानी" शैली का चलन है। हिन्दी और उर्दू (खड़ीबोली) के साथ साथ अवधी, बम्बईया हिन्दी, भोजपुरी, राजस्थानी जैसी बोलियाँ भी संवाद और गानों में उपयुक्त होते हैं। प्यार, देशभक्ति, परिवार, अपराध, भय, इत्यादि मुख्य विषय होते हैं। ज़्यादातर गाने उर्दू शायरी पर आधारित होते हैं।भारत में सबसे बड़ी फिल्म निर्माताओं में से एक, शुद्ध बॉक्स ऑफिस राजस्व का 43% का प्रतिनिधित्व करता है, जबकि तमिल और तेलुगू सिनेमा 36% का प्रतिनिधित्व करते हैं,क्षेत्रीय सिनेमा के बाकी 2014 के रूप में 21% का गठन है।[1] बॉलीवुड भी दुनिया में फिल्म निर्माण के सबसे बड़े केंद्रों में से एक है। बॉलीवुड कार्यरत लोगों की संख्या और निर्मित फिल्मों की संख्या के मामले में दुनिया में सबसे बड़ी फिल्म उद्योगों में से एक है। Matusitz, जे, और पायानो, पी के अनुसार, वर्ष 2011 में 3.5 अरब से अधिक टिकट ग्लोब जो तुलना में हॉलीवुड 900,000 से अधिक टिकट है भर में बेच दिया गया था। [12] बॉलीवुड 1969 में भारतीय सिनेमा में निर्मित फिल्मों की कुल के बाहर 2014 में 252 फिल्मों का निर्माण।

भारत में प्रारंभिक सिनेमा

1895 में लूमियर ब्रदर्स ने पेरिस सैलून सभाभवन में इंजन ट्रेन की पहली फिल्म प्रदर्शित की थी। इन्हीं लूमियर ब्रदर्श ने 7 जुलाई 1896 को बंबई के वाटसन होटल में फिल्म का पहला शो भी दिखाया था। एक रुपया प्रति व्यक्ति प्रवेश शुल्क देकर बंबई के संभ्रात वर्ग ने वाह-वाह और करतल ध्वनि के साथ इसका स्वागत किया। उसी दिन भारतीय सिनेमा का जन्म हुआ था। जनसमूह की जोशीली प्रतिक्रियाओं से प्रोत्साहित होकर नावेल्टी थियेटर में इसे फिर प्रदर्शित किया गया और निम्न वर्ग तथा अभिजात्य दोनों वर्गों को लुभाने के लिए टिकट की कई दरें रखी गईं। रूढ़िवादी स्त्रियो के लिए जनाना शो भी चलाया गया। सबसे सस्ती सीट चार आने की थी और एक शताब्दी बाद भी यही चवन्नी वाले ही सिनेमा, इनके सितारों, संगीत निर्देशकों और दरअसल भारत के संपूर्ण व्यावसायिक सिनेमा के भाग्य विधाता हैं। 1902 के आसपास अब्दुल्ली इसोफल्ली और जे. एस. मादन जैसे उद्यमी छोटे, खुले मैदानों में घूम-घूमकर तंबुओं में बाइस्कोप का प्रदर्शन करते थे। इन्होंने बर्मा से लेकर सीलोन तक सिनेमा के वितरण का साम्राज्य खड़ा किया। प्रारंभिक सिनेमा पियानो अथवा हारमोनियम वादक पर निर्भर होता था जिनकी आवाज प्रोजेक्टर की घड़घड़ाहट में खो जाती थी। लेकिन आयातित फिल्मों और डाक्यूमेंट्री फिल्मों के नयेपन का आकर्षण बहुत जल्दी ही दम तोड़ने लगा। फिर फिल्म प्रदर्शकों को अपनी प्रस्तुतियों को आकर्षक बनाने के लिए नृत्यांगनाओं, करतबबाजों और पहलवानों को मंच पर उतारना पड़ा।

शुरुआती दिनों में विवेकशील भारतीय दर्शक विदेशी फिल्मों से स्वयं को जुड़ा हुआ नहीं पाते थे। 1901 में एच.एस. भटवाड़ेकर

www.ignited.in

('सावे दादा' के नाम से विख्यात) ने पहली बार भारतीय विषयवस्तु और न्यूज रीलों की शूटिंग की। इसके तुरंत बाद तमाम यूरोपीय और अमेरिकी कंपनियों ने भारतीय दर्शकों के लिए भारत में शूट की गई भारतीय न्यूज रीलों का लाभ लिया। फरवरी, 1901 में कलकत्ता के क्लासिक थियेटर में मंचित 'अलीबाबा', 'बुद्ध', 'सीताराम' नामक नाटकों की पहली बार फोटोग्राफी हीरालाल सेन ने की। यद्यपि भारतीय बाजार यूरोपीय और अमेरिकी फिल्मों से पटा हुआ था, लेकिन बहुत कम दर्शक इन फिल्मों को देखते थे क्योंकि आम दर्शक इनसे अपने को अलग-थलग पाते थे। मई 1912 में आयातित कैमरा, फिल्म स्टॉक और यंत्रों का प्रयोग करके हिंदू संत 'पुण्डलिक' पर आधारित एक नाटक का फिल्मांकन आर. जी. टोरनी ने किया जो शायद भारत की पहली फुललेंथ फिल्म है।

पहली फिल्म थी 1913 में दादासाहेब फालके द्वारा बनाई गई राजा हरिश्चन्द्र। फिल्म काफी जल्द ही भारत में लोकप्रिय हो गई और वर्ष 1930 तक लगभग 200 फिल्में प्रतिवर्ष बन रही थी। पहली बोलती फिल्म थी अरदेशिर ईरानी द्वारा बनाई गई आलम आरा। यह फिल्म काफी ज्यादा लोकप्रिय रही। जल्द ही सारी फिल्में, बोलती फिल्में थी।

आने वाले वर्षो में भारत में स्वतंत्रता संग्राम, देश विभाजन जैसी ऐतिहासिक घटना हुई। उन दरमान बनी हिंदी फिल्मों में इसका प्रभाव छाया रहा। 1950 के दशक में हिंदी फिल्में श्वेत-श्याम से रंगीन हो गई। फिल्में का विषय मुख्यतः प्रेम होता था और संगीत फिल्मों का मुख्य अंग होता था। 1960-70 के दशक की फिल्मों में हिंसा का प्रभाव रहा। 1980 और 1990 के दशक से प्रेम आधारित फिल्में वापस लोकप्रिय होने लगी। 1990-2000 के दशक में समय की बनी फिल्में भारत के बाहर भी काफी लोकप्रिय रही। प्रवासी भारतीयो की बढती संख्या भी इसका प्रमुख कारण थी। हिंदी फिल्मों में प्रवासी भारतीयों के विषय लोकप्रिय रहे।

प्रभाव

हिन्दी सिनेमा की शुरुआत राजा हरीश चंद्र पर 1913 मे बनी मूक फिल्म से हुई थी। शुरुआती दौर मे धार्मिक फिल्मे ही बनी। देश की जनता भी यही देखना चाहती थी। यही वजह है की उस समय नैतिकता और धर्म कर्म का भी बोल बाला था। फिर आगे ऐतिहासिक फिल्मे भी आने लगी और खूब सराही गयी। मुगले आजम ने नए कीर्तिमान स्थापित किए। क्योंकि जब हिन्दी सिनेमा बनाना शुरू हुआ था उस समय देश अंग्रेज़ों का गुलाम था इसलिए देश भक्ति की फिल्मे बनाना ख़तरे से खाली नहीं था। लेकिन आजादी के बाद देश भक्ति पर भी फिल्मे बनने लगी और इसमे मनोज कुमार का नाम सबसे ऊपर है जिन्हे भारत कुमार भी उपनाम दे दिया गया था। पिछले कुछ दशको मे तो बहुत सी देश भक्ति पर आधारित फिल्मे बनी और खूब चली भी।

उसके बाद आया सामाजिक विषयों पर बनने वाली फिल्मों का दौर। यूँ तो यदा कदा समाज सुधारको और विचारको पर भी धार्मिक और ऐतिहासिक फिल्मों के दौर पर भी फिल्मे बनती रहती थी, पर उसका नायक पूर्व स्थापित समाज सुधारक और विचारक का ही रोल निभाता था। पर दो आँखें बारह हाथ, जागृती, अछूत कन्या, बंदिनी जैसी फिल्मो का नायक या नायिका एक साधारण व्यक्ति था। इन सभी फिल्मों ने आमजनमानस की सोच मे बदलाव का काम भी किया।

अगला दौर था रोमांटिक फिल्मों का, पर एक बात ध्यान देने वाली है की इन फिल्मों मे भी कुछ न कुछ सामाजिक संदेश जरूर होता था। इस दौर ने देश की जनता के ऊपर, उनकी सोच मे बदलाव के लिए क्रांति कारी काम किया। जो बड़े बड़े विचारक, समाज सुधारक नहीं कर सके वह काम इन फिल्मों ने कर दिखाया। छूयाछूत, सामाजिक भेदभाव, जात पात के खिलाफ इन फिल्मों मे कोई न कोई संदेश जरूर छुपा होता था। इससे नौजवान बहुत प्रभावित भी हुआ और एक अलख से जागा दी इन फिल्मों ने। अब देखिए "कटी पतंग" एक रोमांटिक फिल्म थी, सुपर स्टार राजेश खन्ना जिनका रोमांटिक हीरो के रूप मे कोई जबाब नहीं था। पर कहानी का मूल विधवा विवाह ही था। ऐसी ही एक फिल्म मे राजेश खन्ना एक दलित युवती (पद्मिनी कोल्हापुरी) से प्यार करते हैं। इन फिल्मों ने समाज की रूढ़ियों को तोड़ने मे बड़ी भूमिका अदा की। नौजवान की सोच को बदला। अब समाज पर फिल्मों का इतना प्रभाव या यह कहने नौजवान पीढ़ी पर पड़ा की वह वही करने लगे जो फिल्मों मे होता है। मुझे याद आता है एक इसी प्रकार का किस्सा। एक फिल्म मे जैकी श्राफ मैकेनिक बने थे और एक अमीर लड़की जो अपनी कार ठीक कराने आती है, दोनों प्यार मे डूब जाते हैं। अब उन्ही दिनो की बात है, हमारे पड़ोस मे एक डाक्टर के घर के बाहर सड़क पर एक स्कूटर मैकेनिक अपनी दुकान लगा कर काम करता था और डाक्टर की बेटी अपना स्कूटर उससे ठीक करवाती थी, एक दिन दोनों घर छोड कर भाग गए। अगर आप 60 से 80 के दशक की फिल्मों को देखोगे तो पाओगे की फिल्म की अधिकतर नायिका साड़ी या सूट पहनती थी (एक आध अपवाद जैसे शर्मिला टैगोर ने एक फिल्म मे बिकनी पहनी थी) और यही आम महिलाए भी पहनती थी। उस समय खलनायिकाए ही स्कर्ट, स्लेक्स, और अंग प्रदर्शन करने वाले कपड़े पहनती थी। बाद की फिल्मों मे नायिकाओ ने यह भेद मिटा दिया। अब आप कपड़े देख कर नहीं पहचान सकते की यह नायिका है या खलनायिका। अब यही कपड़े आम महिलाएँ भी

www.ignited.in

पहन रही है। कहने का अर्थ यह है की फिल्मे आम जन जीवन पर गहरा प्रभाव डालती हैं। आज की पीढ़ी भी नायक, नायिकाओं का फैशन मे अनुसरण कर रही हैं। यही नहीं जिस प्रकार से आजकल की फिल्मों की कहानी होती है, संदेश होते हैं उन्हे अपने विचारों मे सम्मिलित कर रही है।

हिन्दी सिनेमा का समाज पर प्रभाव

20वीं शताब्दी के कुछ विशिष्ट आविष्कारों में सिनेमा भी एक है, जिसने भारतीय सामाजिक तानेबाने पर गहरे तक प्रभाव डाला। कहा जाता है कि भारत में रेलगाड़ी के आने से कई लोग नाराज हुए थे। उनका मानना था कि रेल गाड़ी में हर जाति के लोगों को एकसाथ सफर करना होगा, जो तथाकथित उच्च जाति के लोगों को कतई मंजूर नहीं था। माना जाता है कि कुछ ऐसा ही सिनेमा के आगमन पर भी हुआ होगा। रेल की तरह सिनेमा हॉल का विकास भी अनचाहे ही भारत में लोकतांत्रिकता की ओर बढ़ा एक कदम था, जो दलितों और अस्पृश्यों को टिकट खरीदवाकर उच्च जातियों के साथ बैठकर उस भगवान के दर्शन का लाभ देता था, जिसके दर्शन मंदिर में असंभव थे और जिसकी शुरुआत दादा साहब फालके ने हरिश्चन्द्र तारामती' (1913), 'मोहिनी भस्मासुर' (1913), 'लंका दहन' (1917), 'कृष्ण जन्म' (1918), 'कालिया मर्दन' (1919) जैसी धार्मिक फिल्मों के साथ कर दी थी।

भारतीय सिनेमा और समाज के समानान्तर व परस्पर प्रभावों के बारे में प्रकाश डालना ठीक वैसा ही है जैसे, गागर में सागर भरना। समाज और समय फिल्मों में प्रतिबिम्बित होता है या फिल्मों से समाज प्रभावित होता है। दोनों ही बातें अपनी-अपनी सीमाओं में सही हैं। कहानियां कितनी भी काल्पनिक हों, कहीं तो वे इसी समाज से जुड़ी होती हैं। यही फिल्मों में भी अभिव्यक्त होता है। लेकिन हां बहुत बार ऐसा भी हुआ है कि फिल्मों का असर हमारे युवाओं और बच्चों पर हुआ है। सकारात्मक भी और नकारात्मक भी।

किन्तु ऐसा ही असर साहित्य से भी होता है। क्रान्तिकारी साहित्य ने स्वतन्त्रता संग्राम में अनेक युवाओं को प्रेरित किया था। मार्क्स के साहित्य ने भी कई कॉमरेड, नक्सलाईट खड़े कर दिये। अतः समाज पर हर माध्यम के अपने प्रभाव होते हैं। फिल्मों के भी हुए।

स्वतंत्रता प्राप्ति के पहले ही हिन्दुस्तानियों के बीच सांप्रदायिकता के बीज बो दिए गए थे। हिन्दी सिनेमा जबर्दस्त तरीके से इसका विरोध करता रहा। वी. शांताराम द्वारा 1942-43 के आस-पास 'पड़ोसी फिल्म बनाई गई थी। इसमें हिन्दू-मुस्लिम एकता का संदेश दिया गया, जो वक्त की जरूरत थी। पुराने लोग बताते हैं कि 1948 में जब 'पड़ोसी भागलपुर के चित्रपट सिनेमा हाल में लगी तो शहर में हो रहे दंगे समाप्त हो गए थे। एक बार वी. शांताराम ने कहा था कि मुझे मिलने वाला यह सबसे बड़ा उपहार है।

नकारात्मक प्रभाव भी सामने आए। बताया जाता है कि 1981 में प्रदर्शित फिल्म 'एक दूजे के लिए' का क्लाईमेक्स दृश्य देख कई प्रेमी युगलों ने आत्महत्या कर ली थी। खबरें भरी पड़ी हैं ऐसे युवक-युवतियों के किस्सों से, जो फिल्मी से इस तरह प्रभावित हुए कि मन में प्रेम और विवाह को लेकर गुत्थियां बना बैठे। उनके लिए वास्तविक जीवन में सामंजस्य बैठाना मुमकिन नहीं हो सका। कुछ अश्लील किस्म के गीतों ने ईव टीजिंग आम कर दी। स्मोकिंग के दृश्यों ने तो पूरी युवा पीढ़ी को ही जैसे अपने शिकंजे में कस लिया। नतीजतन आज फिल्मों की शुरुआत में धूम्रपान संबंधी चेतावनी जारी करनी पड़ती है।

जैसे-जैसे अपराध की पृष्ठभूमि पर फिल्में बनती रहीं, अपराध जगत में बदलाव आया। असंतुष्ट, बेरोजगार और अकर्मण्य युवकों को यह पैसा बनाने का शॉर्टकट लगने लगा, और सब 'एंग्री यंगमैन' की तर्ज पर स्वयं को सही मानने लगे। आए दिन खबरें छपी होती हैं कि अमुक डकैती या फलां घटना एकदम फिल्मी अंदाज में हुई। यहां यह कहना सही नहीं होगा कि समाज में अपराध के बढ़ते आंकड़ों के प्रति फिल्में ही जिम्मेदार हैं, लेकिन हां फिल्मों ने अपराधियों के चरित्र को जस्टिफाई कर युवकों को एकबारगी असमंजस में जरूर डाला है।

हिन्दी फिल्मों का बाजार जैसे-जैसे विस्तृत हुआ, देश का युवा बेरोजगार आँखों में सपने लेकर अपनी किस्मत आजमाने या तो प्रशिक्षण प्राप्त कर या सीधे घर से भाग कर मुम्बई आने लगे। उनमें से एक दो सफल हुए, शेष लौट गए या बर्बाद हो गए। युवाओं में फिल्मों में अपना कैरियर बनाने के लिए इतना आकर्षण देख फर्जी निर्माता-निर्देशकों तथा प्रशिक्षण केन्द्रों की बाढ़ सी आ गई है।

वैसे कई फिल्मकारों का मानना है कि फिल्में समाज को बदल कर रख दें, ऐसा नहीं होता। सिनेमा से ऐसी उम्मीद लगाना बेइमानी होगा। हालांकि सिनेमा किसी भी देश, काल या वातावरण का चित्रण जरूर करता है। यथार्थ न सही, लेकिन किसी समाज की एक झलक सिनेमा के माध्यम से देखी जा सकती है।

" सिनेमा समाज का वास्तविक चित्रण नहीं होता, बल्कि समाज की कल्पनाओं को प्रतिबिंबित करता है। फिल्में इच्छाओं, उम्मीदों, मूल्यों और परंपराओं को दिखाती हैं। किसी

समाज के बारे में जानकारी लेनी हो, तो उससे जुड़ी फिल्मों को देखा जा सकता है।" 18 ।

हिन्दी सिनेमा ने शहरी दर्शकों को ही नहीं, गांव के दर्शकों को भी प्रभावित किया है। फिल्मी गानों को गुनगुनाने और संवादों की नकल का क्रम 'मुगले आजम', 'शोले' और 'सत्या' तक चल कर आज भी जारी है। दक्षिण भारत की ओर नजर डालें तो देखेंगे कि वहां की जनता फिल्मी कलाकारों को भगवान स्वरूप मानकर उनकी पूजा तक करती है।

" हिन्दुस्तान में सिनेमा का केज लगातार बढ़ता गया है। दुनिया के । किसी भी सिनेमा में फिल्मी कलाकारों को इतना प्यार नहीं मिलता, जितना कि हमें मिलता है। यहां छोटे से छोटे कलाकार को इतना सम्मान और प्यार मिलता है कि हैरत होती है। समाज में बहुत से गुणीजन हैं, लेकिन अटेंशन सबसे ज्यादा हमें ही मिलती है। हमारी बात सुनी जाती है। " 17

'सिनेमा संदेश के प्रसारण का एक सशक्त माध्यम है और सामाजिक मानदंडों को प्रभावित करने वाला एक महत्वपूर्ण कारक बन चुका है। परंतु सिनेमा एक सामाजिक परिवेश में संचालित होता है। और इस प्रकार उसकी, समाज के स्थायित्व, समृद्धि तथा प्रगति में भूमिका है। अतः जो भी लोग फिल्म उद्योग से जुड़े हैं, उन्हें खुद को सामाजिक नेतृत्व का हिस्सा मानते हुए लोगों के कल्याण में सहभागी समझना चाहिए। मनोरंजन तथा सामाजिक प्रासंगिकता के बीच संतुलन कायम रखना इस उद्योग का महत्वपूर्ण दायित्व है तथा इस दिशा में किया गया प्रयास, समाज में इसकी भूमिका तय करेगा।

- राष्ट्रपति (तत्कालीन) प्रतिभा पाटिल 57वां राष्ट्रीय फिल्म पुरस्कार उत्सव, नई दिल्ली (22 अक्टूबर 2010)

प्रख्यात फिल्मकार ऋत्विक घटक के शब्दों में, एक ही समय में सिनेमा लाखों को उकसाता और उत्तेजित करता है। यह तो प्रमाणित है कि सिनेमा समाज पर अपना । प्रभाव छोड़ता है। गैरजरूरी सामाजिक मान्यताओं, रूढ़ियों, अंधविश्वासों को खत्म करने में हिन्दी सिनेमा ने अपनी अहम भूमिका अदा की है। साथ ही बदलते हालात में उत्पन्न होती समस्याओं से निपटने के लिए लोगों को तैयार भी किया है। यहां तक कि आजादी की लड़ाई में भी सिनेमा की भूमिका सीमित रूप में ही सही, पर रही है।

उपसंहार

हिन्दी सिनेमा अपने प्रारंभ से ही बदलावों का साक्षी रहा है। 1913 में अपनी यात्रा शुरू करने के बाद हिन्दी सिनेमा ने सबसे पहला अहम बदलाव 1931 में देखा, जब मूक सिनेमा ने बोलना शुरू कर दिया। हालांकि इस अवस्था में आने में उसे करीब 18 साल लग गए। इसके बाद हिन्दी सिनेमा का परिदृश्य तेजी से बदलता है। गीत-संगीत, कथा, विषय, प्रस्तुतिकरण, आदि सभी क्षेत्रों में बदलाव आते गए। देश, काल, वातावरण का प्रभाव सिनेमा पर स्पष्ट देखा गया और सिनेमा ने भी देश, काल, वातावरण को अपने स्वरूप के अनुरूप गहरे तक प्रभावित किया। स्वतंत्रता के आंदोलन से लेकर स्त्रियों, वंचितों के अधिकारों और समाज को उसी के रूढ़ीवादी चेहरे से रूबरू कराने में सिनेमा ने वह काम किया, जो कोई अन्य आंदोलन नहीं कर सका था।

हिन्दी सिनेमा शुरू से ही दुनिया के अलग-अलग हिस्सों में बन रहे सिनेमा से प्रभावित रहा है। विश्वमंच पर भी हिन्दी फिल्में अपनी पहचान दर्ज कराती रहीं। हिन्दी के फिल्मकारों और कलाकारों की विलक्षण प्रतिभा ने उन्हें और हिन्दी सिनेमा को दुनिया के कोने-कोने तक पहुंचाया। 1946 में बनीं चेतन आनंद की 'नीचा नगर' संभवतः हिन्दी की पहली फिल्म थी जिसने अंतर्राष्ट्रीय मंच पर हिन्दी सिनेमा का अहसास कराया था। सिनेमा के स्तर को ऊपर उठाने के लिए भारत की पहली चुनी हुई सरकार ने कई प्रयास किए। फिल्म विकास के उपक्रम में कार्यरत सरकारी संस्थानों की नींव उसी समय पड़ गई थी।

वर्ष 2013 में हिन्दी सिनेमा अपनी शताब्दी मना रहा है। अपने सौ वर्षों के सफर में हिन्दी सिनेमा ने एक लंबी यात्रा तय कर ली है। बॉलिवुड के नाम से दुनियाभर में लोकप्रिय हिन्दी सिनेमा दुनिया का सबसे बड़ा सिनेमा उद्योग है, जहां हर साल सैंकड़ों की तादाद में बड़ी-छोटी फिल्मों का निर्माण होता है। आज इसका साम्राज्य लगभग पूरी दुनिया में फैल चुका है। दुनिया के लगभग हर देश में हिन्दी फिल्मों को बड़े चाव से देखा जाता है। 1913 में फिल्म 'राजा हरिश्चंद्र के साथ शुरू हुई हिन्दी फिल्मों की यात्रा में कई पड़ाव आए, जिन्होंने इसे वैश्विक रूप दिलाया। अपने शैशव काल से ही हिन्दी फिल्मों ने विश्व मंच पर अपनी मौजूदगी का अहसास दिलाना शुरू कर दिया। था। आर्थिक उदारीकरण और तकनीक में समृद्ध होने के साथ हिन्दी फिल्मों में अभूतपूर्ण परिवर्तन आया। विशेषतौर पर वित्त प्रबंधन, विपणन (मार्केटिंग), वितरण (डिस्ट्रीब्यूशन), और डिजिटलीकरण (डिजिटाइजेशन) के मामले में उल्लेखनीय प्रगति देखी जा सकती है। पूरी दुनिया में फैले प्रवासी भारतीयों और भारत के एक 'बैंड' के रूप में स्थापित हो जाने के बल पर आज बॉलिवुड दुनिया में सबसे ज्यादा देखे जाने वाले सिनेमा, हॉलिवुड को कड़ी टक्कर दे रही हैं। कितने ही अवसरों और मंचों

पर तो हिन्दी फिल्मों और फिल्मकारों को हॉलिवुड से ज्यादा सम्मान मिलने की खबरें आती रहती हैं।

संधर्व ग्रन्थ-सूची:

स्टैडमैन टॉड (2015)। फ़ंककी बॉलीवुड: द वन्य वर्ल्ड ऑफ़ द 1970 इंडियन एक्शन सिनेमा। एफएबी प्रेस आईएसएसएन 9781903254776

चौधरी दीपातीरति (2015-10-01)। सलीम-जावेद द्वारा लिखित: हिंदी सिनेमा की महानतम पटकथा लेखक की कहानी पेंगुइन यूके पी। 58. आईएसएसएन 978 9 352140084

कौशिक भौमिक हमारी अनूठी भारतीय पहचान का एक अनूठी शिक्षा द वायर 12/03/2016

राहेल ड्वायर (2005) 100 बॉलीवुड फिल्मों लोटस कलेक्शन, रूली बुक्स पी। 14. आईएसएसएन 978-81-7436-433-3 6 अगस्त 2013 को पुनःप्राप्त।

चिंतामणी, गौतम (2016)। कयामत से कयामत ताक: द फिल्म द रिविव हुआ हिंदी सिनेमा। हार्पर। आईएसएसएन 978 9 352640 9 80

सेन, मेहेली (2017) हंसिंग बॉलीवुड: हिंदी वाणिज्यिक सिनेमा में लिंग, शैली और अलौकिक। टेक्सास विश्वविद्यालय के प्रेस पी। 18 9. आईएसबीएन 9781477311585

जोशी, प्रिया (2015)। बॉलीवुड का भारत: एक सार्वजनिक काल्पनिक कोलंबिया विश्वविद्यालय प्रेस पी। 171. आईएसएसएन 9780231539074

"अक्षय कुमार हांगकांग में जैकी चान से मिलता है" बॉलीवुड स्टूमामा 20 मई 2004. 23 मार्च 2011 को मूल से संग्रहीत। 11 अप्रैल 2011 को लिया गया।

अरिटी नायर (16 दिसंबर 2007)। "मेज पर बॉलीवुड" द ट्रिब्यून 19 जून 2008 को पुनःप्राप्त

ईसाई जुंगन (4 अप्रैल 2009) "शहरी फिल्म: भारतीय सिनेमा की विविधता" FIPRESCI। 17 जून 200 9 को मूल से संग्रहित। 11 मई 2009 को पुनःप्राप्त।

अनिता एन। वाधवानी "बॉलीवुड मानिया" राइजिंग संयुक्त राज्य अमेरिका में 20 अक्टूबर 2012 को वेबैक मशीन पर संग्रहीत किया गया .. अमेरिकी विदेश विभाग (9 अगस्त 2006) 29 जुलाई 2010 को पुनःप्राप्त

रंगन, बारदवाज (8 जनवरी 2017) "मसाला रेडक्स" हिन्दू। 8 जनवरी 2017 को पुनःप्राप्त गोकुलसिंग, के मोती; डिसानायके, विमल (2004) भारतीय लोकप्रिय सिनेमा: सांस्कृतिक परिवर्तन की एक कथा Trentham पुस्तकें पीपी। 98-99 आईएसबीएन 1-85856-32 9-1

Corresponding Author

Renu Kansal*

Research Scholar of OPJS University, Churu Rajasthan